

पाठ-5 अंतिम दौर 1

उद्देश्य—

सन् 1857 की क्रांति और अन्य सुधारवादी आंदोलनों को समझाने में समर्थता।

भारत में अंग्रेशी राज्य की स्थापना उसके लिए एकदम नयी घटना थी जिसकी तुलना किसी और राजनीतिक परिवर्तन से नहीं की जा सकती थी। भारत पहले भी जीता जा चुका था, लेकिन ऐसे आक्रमणकारियों द्वारा जो उसकी सीमाओं में आकर बस गए और अपने को भारत के जीवन में शामिल कर लिया। उसने अपनी स्वाधीनता कभी नहीं खोई थी और वह कभी गुलाम नहीं बना था।

अंग्रेज़ों ने अपने अंग्रेज़ी नमूने का अनुसरण करते हुए बड़े जमींदार पैदा किए। उनका लक्ष्य था लगान की शकल में अधिक-से-अधिक रुपया, जल्दी-से-जल्दी इकट्ठा किया जाए। इसलिए एक ऐसे वर्ग को पैदा करना ज़रूरी समझा गया जिसके स्वार्थ अंग्रेज़ों के स्वार्थ से अभिन्न हों।

ब्रिटिश शासन ने इस तरह अपनी स्थिति को सुदृढ़ किया। इस व्यवस्था में ज़मींदार थे, राजा थे और सरकार के विभिन्न महकमों में पटवारी, गाँव के मुखिया से लेकर ऊपर तक कर्मचारियों की बहुत बड़ी संख्या थी।

- अट्ठारहवीं शताब्दी में बंगाल में एक अत्यंत प्रभावशाली व्यक्तित्व का उदय हुआ। ये थे राजा राममोहन राय। वे एक नए ढंग के व्यक्ति थे जिनमें प्राचीन और नवीन ज्ञान का मेल था। भारतीय विचारधारा और दर्शन की उन्हें गहरी जानकारी थी। वे संस्कृत, फारसी और अरबी के विद्वान थे। वे समाज सुधारक थे।

मई सन् 1857 में मेरठ की भारतीय सेना ने बगावत कर दी। विद्रोह की योजना खुफ़िया ढंग से बहुत अच्छी तरह बनाई थी लेकिन नियत समय से पहले हुए विस्फोट ने नेताओं की योजना ही बिगाड़ दी। यह केवल सैनिक विद्रोह से कहीं अधिक था। इसका बड़ी तेज़ी से प्रसार हुआ और इसने जनांदोलन और भारतीय स्वाधीनता की लड़ाई का रूप ले लिया।



इस विद्रोह से कुछ श्रेष्ठ छापामार नेता उभर कर आए। इनमें सबसे तेजस्वी थे तांत्या टोपे जिन्होंने कई महीनों तक अंग्रेजों को परेशान किया। आखिर में जब उन्होंने नर्मदा नदी को पार करके मराठा क्षेत्र में इस आशा से प्रवेश किया कि उनके अपने लोग उनकी सहायता और स्वागत करेंगे, तो उनके साथ धोखा हुआ।



इन सबके अलावा एक और विशिष्ट नाम जिसे आज भी आम जनता श्रद्धापूर्वक स्मरण करती है झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई का है, जो बीस वर्ष की आयु में लड़ते-लड़ते मारी गई। जिस अंग्रेज जनरल ने उसका मुकाबला किया उसी ने उसके बारे में कहा था कि वह विद्रोही नेताओं में 'सर्वोत्तम और सबसे बहादुर' थी।

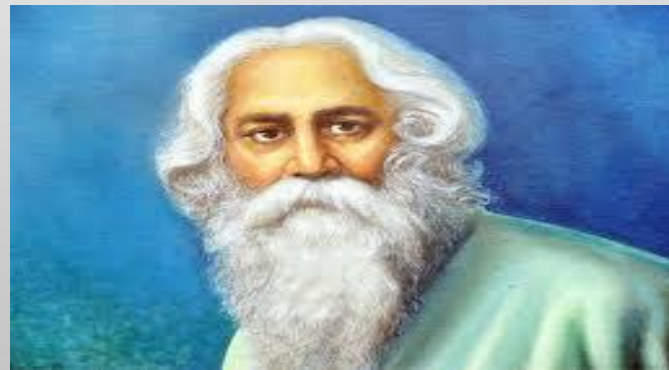


उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में स्वामी दयानंद सरस्वती ने एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण सुधार—
आंदोलन की शुरुआत की लेकिन उसकी जड़ पंजाब के हिंदुओं में जमी। यह आर्य समाज का
आंदोलन था और नारा था 'वेदों की ओर लौटो।'

लगभग स्वामी दयानंद के ही समय में बंगाल में एक दूसरे ढंग का व्यक्तित्व
समाने आया और नए पढ़े लिखे वर्ग के बहुत लोगों पर उसका प्रभाव पड़ा।
वे श्रीरामकृष्ण परमहंस थे। वे सीधे—सादे, विद्वान नहीं पर धर्मप्राण व्यक्ति थे।
उनके मुख्य शिष्य विवेकानंद की जीवनी लिखी।



विवेकानंद के ही समकालीन थे रवींद्रनाथ टैगोर। किंतु वे बाद की पीढ़ी के थे।
टैगोर परिवार ने उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान बंगाल के विभिन्न सुधारवादी
आंदोलनों में आगे बढ़कर भाग लिया था।



नेशनल कांग्रेस, जिसकी स्थापना सन् 1885 में हुई थी, जब प्रौढ़ हुई तो एक नए ढंग का नेतृत्व सामने आया। ये लोग अधिक आक्रामक और अवज्ञाकारी थे और बड़ी संख्या में निम्न मध्यवर्ग, विद्यार्थी और युवा लोगों के प्रतिनिधि थे। बंगाल-विभाजन के विरोध में जो शक्तिशाली आंदोलन हुआ था, उसमें इस प्रकार के कई योग्य और ओजस्वी नेता उभरकर आए। लेकिन इसके सच्चे प्रतीक, महाराष्ट्र के बाल गंगाधर तिलक थे। पुराने नेतृत्व के प्रतिनिधि भी कम उम्र के मराठा सज्जन गोपाल कृष्ण गोखले थे। क्रांतिकारी नारे हवा में गूँज रहे थे और संघर्ष अनिवार्य था।

